**ओ३म्**

**‘सर्वव्यापक कर्मों का साक्षी परमात्मा मुनष्य को बुरे काम करने पर रोकता क्यों नहीं?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, जीवों के प्रत्येक कर्म का साक्षी व फल प्रदाता है। जीवात्मा सत्य व चेतन, सूक्ष्म, एकदेशी, अल्पज्ञ, अनादि, अविनाशी, नित्य, अजर, अमर आदि गुणों वाली सत्ता व पदार्थ है। जीवात्मा को पूर्वजन्म के अभुक्त कर्मों, पाप-पुण्य वा प्रारब्ध के आधार पर भिन्न भिन्न योनियों में से किसी एक योनि में जन्म प्राप्त होता है। मनुष्य योनि में जन्म लेने वाले बालक व युवा-वृद्ध आदि समय के साथ शैशव अवस्था को पाकर बाल अवस्था और फिर किशोरावस्था में प्रवेश करते हैं और उसके बाद युवा हो जाते है। मृत्यु पर्यन्त मनुष्य की शारीरिक अवस्थायें बदलती रहती हैं। हम अनेक मनुष्यों को कभी अच्छे व कभी बुरे कर्म करते हुए देखते हैं तो हमारे व अन्यों के मन में प्रश्न उठता है कि सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान और सभी जीवों के कर्मों का साक्षी ईश्वर इन पाप व बुरे कर्म करने वालों को बुरा काम करने से रोकता क्यों नहीं है? अनेक अल्पज्ञानी मनुष्य तो इसी कारण से नास्तिक बन जाते हैं। विषय कुछ कठिन है परन्तु जीव की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त के आधार पर इस व ऐसे प्रश्नों का समाधान भी वैदिक धर्मियों के पास उपलब्ध है। वह समाधान क्या है? इस पर विचार करते हैं।

 जीवात्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है और अपने किये हुए कर्म के फल भोगने में ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र वा पराधीन है। यहां हमें जीव को कर्म करने की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को समझना है। यदि यह समझ लिया तो समस्या का समाधान हो जायेगा। एक उदाहरण पर विचार करते हैं। हमारे देश में अनेक सरकारी अधिकारी काम करते हैं। उन्हें काम करने के नियम बता दिये जाते हैं और उन्हें उसके अन्तर्गत काम करने की स्वतन्त्रता होती है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध नियम बने हुए हैं। भ्रष्टाचार दण्डनीय अपराध होता है। प्रत्येक अधिकारी जानता है कि यदि उसने भ्रष्टाचार किया तो वह दण्डित किया जायेगा। इस पर भी वह लोभवश भ्रष्टाचार कर बैठता है। वह सोचता है कि किसी को पता नहीं चलेगा, वह धनवान बन जायेगा और सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करेगा। वह प्रथम बार छुप कर भ्रष्टाचार करता है और बच जाता है। अब उसे इस अनुचित आचरण का संस्कार पड़ जाता है जो उसे पुनः बुरे कामों को करने की प्रेरणा करता है। वह अब बार बार अनुचित काम वा भ्रष्टाचार करता है। कभी न कभी वह फंस जाता है। उसके भ्रष्टाचार के प्रमाण उपलब्ध हो जाते हैं और उसे न केवल काम से हटा दिया जाता है अपितु जेल की सजा का दण्ड भी मिलता है। यहां हम देखते हैं कि भ्रष्टाचार के आरोप में उसे तब दण्ड मिलता है जब वह अपराध कर लेता है और जांच के बाद उसका अपराध सिद्ध हो जाता है। उसे कर्मं करने की स्वतन्त्रता थी इसलिये उसे बीच में रोका नहीं गया। दण्ड विधान के डर से वह बुरा काम नहीं करेगा, इसकी उससे अपेक्षा की जाती है। जब उसका अपराध पूरा हो गया और उच्चाधिकारियों को इसकी जानकारी मिली तो उसे जांच कराकर उसके अपराध के अनुसार दण्ड दिया गया। दण्ड मिलने पर उसको पश्चाताप होता है। जीवात्मा के साथ भी कुछ इसी प्रकार व्यवहार ईश्वर करता है। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है, अतः ईश्वर उसको अपराध न करने की प्रेरणा, उसके मन में भय-शंका-लज्जा आदि उत्पन्न कर, करता तो है परन्तु जीव की स्वतन्त्रता के कारण उसे बलपूर्वक रोकता नहीं है। यदि वह मनुष्य को बुरे काम करने से बलपूर्वक रोके तो फिर यह जीव की स्वतन्त्रता में बाधा होगी। हमने कई बार गलती करने, यथा नशा करने व बुरे लोगो की संगति करने आदि मामलों में माता-पिता द्वारा अपने बच्चों को डांटे जाने पर बच्चों को यह कहते हुए सुना है कि यह जिन्दगी उनकी है, वह जो चाहें सो करें। इस पर कुछ माता-पिता तो मौन हो जाते हैं और कुछ उत्तर देते हैं परन्तु फिर भी माता-पिता की सलाह को मानना व न मानना उनकी सन्तानों के अपने अधिकार व वश में है। यहां माता पिता को दण्ड देने का अधिकार नहीं है परन्तु माता-पिता जानते हैं कि सन्तान के बुरे कर्मों का परिणाम व फल भविष्य में बुरा ही होना है। यह कर्म-फल सिद्धान्त है और बुरे कर्म का यथासमय दुःखरूपी बुरा फल मिलना ही ईश्वरी नियम है। अच्छे काम करने से मनुष्य की उन्नति होती है, वह सुखी होता है और अशुभ कर्म करने से अवनति होकर दुःख पाता है। ईश्वर जीवात्मा को बुरे काम न करने की प्रेरणा तो देता है परन्तु बलपूर्वक रोकता नहीं है क्योंकि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। हां, जीव को भविष्य में अपने किए हुए बुरे कर्म का दुःख रूपी फल अवश्य मिलता है। जीव को बुरे कर्मों को करते समय व कर्म करने से पूर्व ही रोकना व कर्म की समाप्ती पर भी दण्ड न देकर बहुत बाद में दण्ड देना, इसका कारण बहुत लोगों की समझ में नहीं आता और इस अनभिज्ञता के कारण कई बार शिक्षित व अशिक्षित लोग कर्म संबंधी गलत निर्णय कर बैठते हैं।

 यहां एक समस्या यह भी आती है कई लोग बुरे कर्म करते हैं और सुखी देखे जाते हैं और म्त्यु तक भी उनके बुरे कर्मों का फल उनको मिलता हुआ नहीं देखा जाता। इसका क्या कारण है? इसका कारण जो समझ में आता है वह यह है कि जीव अनादि व अमर है और अनन्त काल तक उसका जन्म व मरण होता रहेगा। एक जन्म के बचे हुए कर्मों को वह आगामी जन्म में व उसके बाद के जन्मों में भी भोग सकता है। हमें यह जो जन्म मिला है इसकी जाति, आुय व भोग हमारे प्रारब्ध अर्थात् पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार निर्धारित व निश्चित हुए हैं। इसका प्रमाण योगदर्शन में महर्षि पतंजलि ने दिया है और बताया है कि मनुष्य के पूर्वजन्म के कर्मों वा प्रारब्ध के अनुसार ही जीवात्मा के भावी जन्म के जाति, आयु व भोग निर्धारित होते हैं। मनुष्य वा किसी भी प्राणी पूर्ण आयु को जीवन का भोग काल कह सकते हैं और जिन कर्मों का भोग करना है वह भी पूर्वजन्म के कर्मों पर ही अधिकांशतः आधारित है। इस जन्म के क्रियमाण कर्मों से इतर कर्म अभी पके नहीं, अतः उनके पकने पर ही फल मिलेगा। कर्म के पके बिना ही बीच में सभी क्रियमाण व अन्य संचित होने वाले आदि कर्मो के फल दे देना ईश्वर की न्याय व्यवस्था में सम्मिलित नहीं है। कुछ क्रियमाण कर्मों का फल मिलता है और कुछ कर्म संचित खाते में चले जाते हैं। यदि इस जन्म में संचित श्रेणी के कर्मों का फल पहले दे दिया जायेगा तो पिछले कर्म तो बचे ही रहेंगे। न्याय यही कहता है कि पहले पुराना कर्मों का ऋण चुकता हो फिर नया चुकता किया जाये। यह बात जहां बुरे कर्मों पर लागू होती है वहीं नये शुभ कर्मों पर भी लागू होती है। हम ईश्वरोपासना, यज्ञादि एवं माता-पिता-आचार्यो व पात्रों की सेवा व सत्कार करते हैं। इन कर्मों का फल हमें साथ-साथ नहीं मिलता। इसी तरह से सभी बुरे कर्मों का भी नहीं मिलता। जिन व कुछ क्रियमाण कर्मों का फल मिल जाता है उनसे अतिरिक्त बचे हुए कर्म संचित कर्म बन जाते हैं जिनका फल बाद में, परजन्म व जन्मों में मिलता है, ऐसा वैदिक साहित्य सहित विचार व चिन्तन करने पर ज्ञात होता है और यह उचित ही है। वेद ने तो मनुष्य को आगाह व सावधान किया ही हुआ है कि, हे मनुष्य! तू वेद विहित कर्मों को करते हुए सौ वर्ष व अधिक आयु पर्यन्त सुखपूर्वक जीवित रहने की इच्छा करे। इससे अच्छा अन्य कोई मार्ग नहीं है। अतः निष्कर्ष यही निकलता है कि जिस प्रारब्ध व जिन कर्मों के आधार पर हमारा जन्म हुआ, जाति मिली, आयु निश्चित हुई व भोग निर्धारित हैं, इस जन्म में पहले उनका ही हमें भोग करना होगा और इस जन्म के कर्मों का फल, क्रियमाण के अतिरिक्त, इस जन्म के बाद परजन्मों में मिलेगा। अतः कर्म फल सिद्धान्त व ईश्वर के विधान को समझना व विश्वास करना ही सच्ची आस्तिकता व मनुष्य के लिए श्रेयस्कर है। बुरा व्यक्ति इस जन्म में अपने पूर्व कर्मों के कारण सुखी है। पाप कर्मों को करके भी उसे सुख मिल रहा है परन्तु जब इसका फल ईश्वर देगा तो उसे दुःख की स्थिति से ही गुजरना होगा। यह स्थिति इस जन्म व अगले जन्मों में निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

 हम समझते हैं कि जो लोग बुरा काम करते हैं और उसकी सफलता में प्रसन्न होते हैं वह अज्ञानी ही कहे जायेंगे क्योंकि उन्हें यह ज्ञात नहीं है कि **‘अवश्यमेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं।’** अर्थात् मनुष्य को अपने किये हुए सभी कर्मों के सुख-दुःख रूपी फल अवश्यमेव भोगने होंगे। इन्हीं शब्दों के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**